



प्रकाशन हेतु अनुमोदित

माननीय उच्च न्यायालय, छत्तीसगढ़, बिलासपुर

रिट याचिका संख्या.510/2003

**याचिका कर्ता:-** मदन लाल गुप्ता पिता श्री राम किशन गुप्ता,  
उम्र लगभग 47 वर्ष, निवासी भारतीय स्टेट बैंक के सामने, रेस्ट  
हाउस रोड, पोस्ट- पेंड्रा रोड, जिला-बिलासपुर (छग.)।

**बनाम**

**उत्तरवादिगण:-**

- 1) छत्तीसगढ़ राज्य प्रमुख सचिव विधि छत्तीसगढ़ शासन, रायपुर  
( सी. जी.) के माध्यम से
- 2) जिला एवं सत्र न्यायाधीश बिलासपुर/नोटरी नियम के अंतर्गत सक्षम  
प्राधिकारी, जिला बिलासपुर, छग.
- 3) सहायक सचिव छत्तीसगढ़ राज्य विधि विभाग छत्तीसगढ़

भारत के संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत रिट याचिका।



उच्च न्यायालय, बिलासपुर छत्तीसगढ़

रिट याचिका संख्या 3247/2003

चंद्र प्रकाश शर्मा

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 1171/2003

प्रशांत कुमार ठाकुर

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 1600/2003

अनिल कुमार तिवारी

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 494/2003

गोपाल कृष्ण बेरिवल

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य





रिट याचिका संख्या 1894/2000

सिलवेस्टर टोप्पो

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 510/2003

मदन लाल गुप्ता

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 624/2003

राजकुमार

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य



दिनांक 24 मार्च, 2005 को आदेश हेतु सुचिबुद्ध करें

एल.सी.भादू

न्यायाधीश



**छत्तीसगढ़ उच्च न्यायालय, बिलासपुर**

**रिट याचिका संख्या 3247/2003**

चंद्र प्रकाश शर्मा

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

**रिट याचिका संख्या 1171/2003**

प्रशांत कुमार ठाकुर

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

**रिट याचिका संख्या 1600/2003**

अनिल कुमार तिवारी

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

**रिट याचिका संख्या 494/2003**

गोपाल कृष्णा बेरिवल

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य





रिट याचिका संख्या 1894/2000

सिलवेस्टर टोप्पो

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 510/2003

मदन लाल गुप्ता

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य

रिट याचिका संख्या 624/2003

राजकुमार

बनाम

छत्तीसगढ़ राज्य और दो अन्य



24 मार्च, 2005 को आदेश हेतु सुचिबुद्ध करें



## उपस्थित :-

श्री वाई.सी. शर्मा,  
अधिवक्ता

डब्लू.पी. संख्या 3247/2003 और 1171/2000  
में याचिका कर्ताओं के लिए

श्री प्रशांत जायसवाल, वरिष्ठ  
अधिवक्ता, अधिवक्ता अली  
असगर के साथ

याचिका कर्ता के लिए डब्लू.पी.  
संख्या 1600/2003.

श्रीमान . राहुल झा  
अधिवक्ता

डब्लू.पी.संख्या.494/2003 और  
1894/2003 में याचिका कर्ताओं के लिए।

श्रीमती रेणु कोचर, अधिवक्ता:

डब्लू.पी.संख्या.510/2003 में याचिका  
कर्ताओं के लिए।

डब्लू.पी. संख्या 624/2003 में याचिका  
कर्ताओं के ओर से कोई उपस्थित नहीं  
हुआ !

श्री रविश चंद्र अग्रवाल, (ए.जी.) श्री  
प्रमोद कुमार वर्मा, (अति. ए.जी.)  
और श्री सुमेश बजाज, उप जी.ए. के  
साथ:

राज्य/प्रतिवादी के लिए।



## आदेश

(24 मार्च, 2005 को पारित)

**एल.सी. भादू न्यायाधीश**

1. भारतीय संविधान के अनुच्छेद 226/227 के तहत इन रिट याचिकाओं के माध्यम से याचिका कर्ताओं ने 31 दिसंबर, 2002 के शासकीय आदेश के आधार पर नोटरी के रूप में व्यवसाय करने के लिए उनके प्रमाणपत्रों के नवीनीकरण से इनकार करने के आदेशों की वैधता और औचित्य पर सवाल उठाया है।

2. इन रिट याचिकाओं को दायर करने के पीछे संक्षिप्त तथ्य यह है कि याचिका कर्ता जो पेशे से अधिवक्ता हैं और छत्तीसगढ़ राज्य के विभिन्न स्थानों में कानून का विधि व्यवसाय कर रहे हैं, वे सभी सार्वजनिक रूप से पब्लिक नोटरी के रूप में कार्य कर रहे थे क्योंकि उन्हें नोटरी अधिनियम, 1952 (जिसे आगे अधिनियम के रूप में संदर्भित किया गया है) के तहत तत्कालीन मध्य प्रदेश राज्य द्वारा नियुक्त किए गए थे। अंत में, राज्य सरकार ने 31 दिसंबर, 2002 के अपने कार्यकारी आदेश के आधार पर उनके नवीनीकरण को इनकार कर दिया था, जिसके तहत राज्य के लिए निर्धारित नोटरी पदों की संख्या को देखते हुए यह निर्णय लिया गया था कि अधिनियम की धारा 5 के तहत, नोटरी पब्लिक के रूप में व्यवसाय करने के लिए अधिक संख्या में वकीलों को मौका देने के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में व्यवसाय करने के प्रमाण पत्र को एक बार नवीनीकृत किया जाना है। हालाँकि, यदि इस तिथि से पहले किसी प्रमाण पत्र का नवीनीकरण किया गया है, तो वह अवधि समाप्त होने की तिथि तक प्रभावी रहेगा।



3. चूंकि इन सभी रिट याचिकाओं में विधि का एक ही प्रश्न शामिल है, इसलिए इनका निपटारा इस आम सहमति से किया जा रहा है।

4. याचिका कर्ता चंद्र प्रकाश शर्मा ( डब्लू.पी.संख्या.3247/2003) को रायपुर सिविल जिले के लिए दिनांक 2-1-1989 के आदेश के तहत नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था, उनका प्रमाण पत्र समय-समय पर नवीनीकृत किया गया, और अंतिम रूप से इसे 1-1-2001 तक नवीनीकृत किया गया, इसके बाद, नवीनीकरण के लिए उनका आवेदन दो साल तक लंबित रहा। याचिका कर्ता प्रशांत कुमार ठाकुर ( डब्लू.पी.संख्या.1171/2003) को वर्ष 1993 में कौडागांव, जिला: बस्तर के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था, इसके बाद, उनके प्रमाण पत्र को समय-समय पर नवीनीकृत किया गया, और अंतिम रूप से उन्होंने 8-8-2002 को नवीनीकरण के लिए आवेदन किया, लेकिन उतर वादियों ने दिनांक 26-12-2002 के आदेश के तहत उनके प्रमाण पत्र को नवीनीकृत करने से इनकार कर दिया। इसी तरह, याचिका कर्ता अनिल कुमार तिवारी ( डब्लू.पी.संख्या.1600/2003) को जिला: बस्तर के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था, जिसे समय-समय पर 21-7-2002 तक के लिए नवीनीकृत किया गया था, और अंतिम रूप से उन्होंने अनुलग्न पी -4 के तहत नवीनीकरण के लिए आवेदन किया था, लेकिन अनुलग्न पी -5 के तहत इसे खारिज कर दिया गया था। याचिका कर्ता गोपाल कृष्ण बेरिवल (डब्लू.पी.संख्या.494/2003) को दिनांक 10-11-1978 को जिला: रायगढ़ के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था, उसके बाद समय-समय पर उनके प्रमाण पत्र को 9-11-2002 तक के लिए नवीनीकृत किया गया, और उन्होंने 17-10-2002 को नवीनीकरण के लिए आवेदन किया, जिसे दिनांक 10-1-2003 को अस्वीकार कर दिया गया। याचिका कर्ता सिल्वेस्टर टोपों (डब्लू.पी.संख्या.1884/2003) को वर्ष 1985 में धरमजयगढ़, जिला: रायगढ़ के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था,



उसके बाद, उनके प्रमाण पत्र को समय-समय पर नवीनीकृत किया गया, और संभवतः 26-5-2003 को अस्वीकार कर दिया गया। याचिका कर्ता मदन लाल गुप्ता (डब्लू.पी.संख्या.510/2003) को 30-5-1992 को नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था और उनके प्रमाण पत्र को समय-समय पर 29-5-2001 तक नवीनीकृत किया गया था, उसके बाद, उनके नवीनीकरण को 23-12-2002 के आदेश द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। याचिका कर्ता राजकुमार (डब्लू.पी.संख्या.624/2003) को वर्ष 1985 में जांजगीर, जिला: जांजगीर-चांपा के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था, उनके प्रमाण पत्र को समय-समय पर नवीनीकृत किया गया था, और अंत में 10-1-2003 के आदेश द्वारा नवीनीकरण को अस्वीकार कर दिया गया था।

5. इन रिट याचिकाओं में इस न्यायालय के विचारार्थ जो प्रश्न उठता है, वह यह है कि क्या राज्य सरकार अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (2) के संशोधित प्रावधानों के अंतर्गत 31 दिसंबर, 2002 का आदेश जारी करने की हकदार थी, जिसके तहत सभी विधि व्यवसायियों को एक बार के बाद अपने प्रमाणपत्रों को नवीनीकृत करने के अधिकार से वंचित कर दिया गया है।

6. याचिका कर्ताओं के वकील ने तर्क दिया कि यह सही है कि 1999 के संशोधन अधिनियम संख्या 36 के अनुसार अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (1) और (2) में “करेगा” शब्द को “करना चाहिए” शब्द से प्रति स्थापित किया गया है। लेकिन यह करना चाहिए शब्द राज्य सरकार को यह निर्णय लेने का पूर्ण अधिकार नहीं देता कि इस आदेश के जारी होने के बाद नोटरी पब्लिक के प्रमाण पत्र का नवीनीकरण केवल एक बार किया जाएगा और उसके बाद नहीं ताकि उपलब्ध पदों की निश्चित संख्या को देखते हुए अधिक से अधिक व्यवसाय रत वकीलों को नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त करके समायोजित किया जा सके। उक्त निर्णय मनमाना, तर्कहीन और यह राज्य के विवेक



पर रोक लगाने के बराबर है और सार्वजनिक हित के विरुद्ध है।  
विधि विवेक पर रोक लगाने को मान्यता नहीं देता।

7. दूसरी ओर, माननीय महाधिवक्ता ने तर्क दिया कि वर्ष 1999 में संशोधन से पहले अधिनियम की धारा की उपधारा (1) और (2) में 'करेगा' शब्द था, इसलिए केंद्र और राज्य सरकारों के पास प्रमाण पत्र को नवीनीकृत करने से इनकार करने का कोई अधिकार नहीं था, लेकिन उसके बाद, केंद्र सरकार ने अपने विवेक से नवीनीकरण की अवधि को 3 वर्ष से बढ़ाकर 5 वर्ष करने का नीतिगत निर्णय लिया और व्यवसाय के प्रमाण पत्र के नवीनीकरण की प्रक्रिया को युक्तिसंगत बनाने के लिए 'करेगा' शब्द के स्थान पर "करना चाहिए" शब्द को प्रति स्थापित किया और राज्य सरकार ने आपत्तिजनक आदेश जारी किया कि एक बार नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त होने वाला अधिवक्ता दस वर्षों के लिए नोटरी पब्लिक के रूप में अभ्यास करने का हकदार हो जाता है और वह अवधि पर्याप्त मानी जाती है। नोटरी पब्लिक के रूप में अभ्यास करने के लिए अधिवक्ता के लिए उस अवधि को पर्याप्त मानते हुए और अधिक से अधिक वकीलों को समायोजित करने और मौका देने के लिए, 31 दिसंबर, 2002 का आदेश जारी किया गया था। इसे किसी भी तरह से सरकार के विवेक पर रोक नहीं कहा जा सकता है। उन्होंने आगे तर्क दिया कि उक्त नीतिगत निर्णय का अधिनियम के उद्देश्य से उचित संबंध है। राज्य सरकार ने उन अधिवक्ताओं की एक श्रेणी को वर्गीकृत करने का नीतिगत निर्णय लिया है जो दस वर्षों तक नोटरी पब्लिक के रूप में अभ्यास करने के बाद प्रमाण पत्र के नवीनीकरण के लिए अपात्र हो जाते हैं। इस दृष्टिकोण के लिए, उन्होंने (1974) 1 एससीसी 534 (श्री राम शुगर इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम आंध्र प्रदेश राज्य और अन्य) में रिपोर्ट किए गए सर्वोच्च न्यायालय के संविधान पीठ के निर्णय पर भरोसा किया। अंततः, माननीय महाधिवक्ता ने तर्क दिया कि याचिका कर्ताओं ने नीतिगत निर्णय को चुनौती नहीं दी है, इसलिए, इस आधार पर भी याचिका कर्ताओं की याचिकाएँ विफल हो जाती हैं।



8. जहां तक महाधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत अंतिम तर्क का सवाल है, डब्लू.पी. संख्या 3247/2003 के अवलोकन से पता चलता है कि याचिका कर्ता ने 31-12-2002 के आक्षेपित आदेश की वैधता और शुद्धता पर अनुचित होने के आधार पर सवाल उठाया है, और यह सामूहिक रूप से इनकार किए जाने के बराबर है। नोटरी के प्रमाण पत्र को नवीनीकृत करने से इनकार करना मनमाना है। डब्लू.पी. संख्या 3247/2003 के पैरा 5.8 में यह भी उल्लेख किया गया है कि राज्य की कार्यवाही पूरी तरह से मनमानी है और कानून में इसे बनाए नहीं रखा जा सकता है। इसलिए, इस रिट याचिका में नीतिगत निर्णय को मनमाना होने के कारण चुनौती दी गई है। बेशक, अन्य याचिकाओं में विशेष रूप से इस आधार को नहीं उठाया गया है, लेकिन मेरे विचार से, अगर इस रिट याचिका में इसे मनमाना, अन्यायपूर्ण और तर्कहीन माना जाता है, तो यह सभी मामलों पर लागू होगा।

9. पक्ष कारों के लिए नियुक्त अधिवक्ता द्वारा प्रस्तुत तर्कों को समझने के लिए, अधिनियम के सुसंगत प्रावधानों की पृष्ठभूमि पर एक नज़र डालना लाभदायक होगा। मूल अधिनियम के अनुसार, धारा 5 की उप-धारा (1) और (2) में 'करेगा' शब्द था जिसे संशोधित अधिनियम संख्या 36, 1999 के द्वारा " करना चाहिए" शब्द से प्रति स्थापित कर दिया गया है। अधिनियम के असंशोधित और संशोधित प्रावधानों की तुलनात्मक तालिका सही तस्वीर दिखाएगी।

ए/ धारा 5 की उपधारा (1) के अनुसार,

पुराना - प्रत्येक नोटरी जो इस रूप में व्यवसाय करने का आशय रखता है, उसे नियुक्त करने वाली सरकार द्वारा निर्धारित राशि का भुगतान करने पर हकदार होगा-कोई भी

नया - प्रत्येक नोटरी जो इस रूप में अभ्यास करने का इरादा रखता है, उसे नियुक्त करने वाली सरकार को निर्धारित शुल्क का भुगतान करने पर, यदि कोई हो, हकदार हो सकता है-



ब/ धारा 5(1)(बी) में

पुराना - उसे पांच वर्ष की अवधि के लिए व्यवसाय करने के लिए अधिकृत करने वाले प्रमाण पत्र के लिए, उस तारीख से तीन वर्ष की अवधि के लिए, जिस तारीख को उसे प्रमाण पत्र जारी किया गया था। :

नया - प्रमाण पत्र जारी होने की तारीख से पांच वर्ष की अवधि के लिए प्रैक्टिस करने हेतु उसे अधिकृत करने वाला प्रमाण पत्र।

सी/ उप-धारा (2) प्रति स्थापित

पुराना- प्रत्येक ऐसा नोटरी जो उस अवधि की समाप्ति के पश्चात् भी प्रैक्टिस करना जारी रखना चाहता है जिसके लिए इस धारा के अंतर्गत उसका प्रैक्टिस प्रमाणपत्र जारी किया गया है, उसे नियुक्त करने वाली सरकार को आवेदन करने तथा निर्धारित फीस, यदि कोई हो, का भुगतान करने पर, एक बार में तीन वर्ष के लिए अपने प्रैक्टिस प्रमाणपत्र का नवीकरण कराने का हकदार होगा।

नया- नोटरी की नियुक्ति करने वाली सरकार, आवेदन और निर्धारित शुल्क प्राप्त होने पर, किसी भी नोटरी के व्यवसाय के प्रमाण पत्र को पांच साल की अवधि के लिए नवीनीकृत कर सकती है।

10. अधिनियम की धारा 2 (सी) में परिभाषित किया गया है, "कानूनी व्यवसायी का अर्थ अधिवक्ता अधिनियम, 1961 के प्रावधानों के तहत किसी भी तालिका में दर्ज अधिवक्ता है। धारा 2 (द ) में परिभाषित किया गया है कि "नोटरी" का अर्थ इस अधिनियम के तहत नियुक्त व्यक्ति है। धारा 3 में यह परिकल्पना की गई है कि पूरे भारत या उसके किसी भी भाग के लिए केंद्र सरकार और पूरे राज्य या उसके किसी भी हिस्से के लिए कोई भी राज्य सरकार किसी भी विधि व्यवसायी या अन्य व्यक्ति को नोटरी के रूप में नियुक्त कर सकती है, जिसके पास ऐसी योग्यताएं हैं, जो निर्धारित की जा सकती हैं।

धारा 4 केंद्र और राज्य सरकार द्वारा रजिस्ट्रारों के रखरखाव से



संबंधित है। तथा नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त व्यक्ति के बारे में अधिनियम में उल्लिखित सुसंगत प्रविष्टियां करना।

11. अधिनियम की धारा 5 में "रजिस्टर में नाम दर्ज करना तथा व्यवसाय प्रमाण-पत्र जारी करना या उसका नवीनीकरण करना" शामिल है। असंशोधित प्रावधानों के तहत नियुक्ति तीन वर्ष के लिए थी तथा संशोधन के बाद इसे बढ़ाकर पांच वर्ष कर दिया गया है तथा नवीनीकरण भी पांच वर्ष के लिए है। संशोधन के बाद विशेष रूप से उप-धारा (2) में महत्वपूर्ण परिवर्तन किया गया है। पुरानी धारा में यह अधि देश था कि इस धारा के तहत नियुक्ति करने वाली शासन को आवेदन करने तथा निर्धारित शुल्क, यदि कोई हो, का भुगतान करने पर वह अपने व्यवसाय प्रमाण-पत्र का नवीनीकरण करवाने का हकदार होगा, जबकि नई धारा के अनुसार "नोटरी की नियुक्ति करने वाली सरकार, आवेदन प्राप्त होने तथा निर्धारित शुल्क के भुगतान पर किसी भी नोटरी के व्यवसाय प्रमाण-पत्र का एक बार में पांच वर्ष की अवधि के लिए नवीनीकरण कर सकती है" को शामिल किया गया है। 'करेगा तथा हकदार होगा' शब्दों को विलोपित कर उनके स्थान पर 'करेगा तथा नवीनीकृत करेगा' शब्द प्रति स्थापित हैं। इसलिए, संशोधित अधिनियम संख्या 36, 1999 द्वारा स्वतः नवीनीकरण तथा हकदार को समाप्त कर दिया गया है।

12. अधिनियम की धारा 6 में "नोटरी की सूचियों का वार्षिक प्रकाशन" की परिकल्पना की गई है। धारा 7 में "नोटरी की मुहर" की परिकल्पना की गई है। धारा 8 में "नोटरी के कार्य" की परिकल्पना की गई है। धारा में "प्रमाणपत्र के बिना व्यवसाय पर वर्जन " की परिकल्पना की गई है। इसके अलावा, धारा 10 में "धारा 1 में उल्लिखित (क ) से (कक) के आधार पर ऐसे व्यक्ति के अनुरोध पर रजिस्टर से नाम हटाने की परिकल्पना की गई है; या उसने उसके द्वारा भुगतान किए जाने वाले किसी निर्धारित शुल्क का भुगतान नहीं किया है; या वह एक अनुमोदित दिवालिया है; या निर्धारित तरीके से जांच करने पर, उसे ऐसे व्यावसायिक या अन्य कदाचार का दोषी पाया गया है, जो



शासन की राय में, उसे नोटरी के रूप में व्यवसाय करने के लिए अयोग्य बनाता है, या किसी न्यायालय द्वारा नैतिक पतन से जुड़े अपराध के लिए दोषी ठहराया गया है; या उसने अपने व्यवसाय प्रमाण पत्र का नवीनीकरण नहीं कराया है। इसलिए, ये वे आधार हैं जो धारा 10 में नोटरी के नाम रजिस्टर से हटाने के संबंध में बताए गए हैं। धारा 14 "विदेशी नोटरी द्वारा किए गए नोटरी कार्यों की मान्यता के लिए पारस्परिक व्यवस्था" के बारे में है। धारा 15 "नियम बनाने की शक्ति" के बारे में है।

13. चूंकि, नोटरी नियम, 1956 (जिसे आगे 'नियम' कहा जाएगा) का नियम 3 "नोटरी के रूप में नियुक्ति के लिए योग्यता" के बारे में है, जिसमें यह उल्लेख किया गया है कि नोटरी बनने के लिए व्यक्ति के पास कम से कम 10 वर्ष का अनुभव होना चाहिए, या अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति या महिलाओं के मामले में सात वर्ष का अनुभव होना चाहिए, या वह भारतीय विधिक सेवा का सदस्य हो; या न्यायिक सेवा के सदस्य के रूप में दस वर्ष का अनुभव; या अधिवक्ता के रूप में नामांकन के बाद विधि के विशेष ज्ञान की आवश्यकता वाले केंद्र सरकार या राज्य सरकार के अधीन कोई पद धारण किया हो या न्यायाधीश, महाधिवक्ता या सशस्त्र बलों के विधिक विभाग में कोई पद धारण किया हो। नियमों के नियम 4 में "नोटरी के रूप में नियुक्ति के लिए आवेदन" की परिकल्पना की गई है। नियम 6 में "आवेदन पर प्रारंभिक कार्रवाई" की परिकल्पना की गई है कि सक्षम प्राधिकारी उसके द्वारा प्राप्त प्रत्येक आवेदन की जांच करेगा और यदि आवेदक के पास योग्यता नहीं है तो वह छह महीने के भीतर आवेदन को अस्वीकार करने का भी हकदार है। नियम 6 के आगे उप-नियम (2) (ख) में परिकल्पना की गई है कि सक्षम प्राधिकारी किसी भी विधिक परिषद, अधिवक्ता संघ से आवेदक के बारे में पता लगा सकता है और आवेदक की नोटरी के रूप में नियुक्ति पर आपत्ति, यदि कोई हो, को इस उद्देश्य के लिए निर्धारित समय के भीतर प्रस्तुत किया जाना चाहिए। नियम 7 में "सक्षम प्राधिकारी



द्वारा अनुशंसा " की परिकल्पना की गई है। नियम 8 (1) के अनुसार, सक्षम प्राधिकारी की प्रतिवेदन प्राप्त होने पर, उपयुक्त सरकार प्रतिवेदन पर विचार करेगी और फिर आवेदन को स्वीकार करेगी । इसके बाद, नियम 8 का उप-नियम (3) आवेदन खारिज होने पर समीक्षा के बारे में परिकल्पना करता है। नियम 8 का उप-नियम (4क ) प्रत्येक राज्य के लिए अनुसूची के अनुसार नोटरी के पदों की संख्या निर्धारित करने की परिकल्पना करता है। नियम बी(क) "अभ्यास के क्षेत्र का विस्तार" के बारे में है। नियम 9 "अभ्यास के प्रमाण पत्र जारी करने और नवीनीकरण तथा क्षेत्र के विस्तार के लिए शुल्क" के बारे में है। नियम 10 नोटरी द्वारा किए जाने वाले विभिन्न कार्यों पर लगाए जाने वाले शुल्क के बारे में है। फिर नियम 12 "नोटरी की मुहर" के बारे में है। नियम 13 "नोटरी के व्यावसायिक या अन्य कदाचार के आरोपों की जांच" के बारे में परिकल्पना करता है।

14. इसलिए, अधिनियम और नियमों के तहत एक योजना तैयार की गई है। उपरोक्त प्रावधानों पर एक नज़र डालने से पता चलता है कि नोटरी पब्लिक बनने के लिए व्यक्ति की पात्रता, नोटरी पब्लिक की नियुक्ति की प्रक्रिया, प्रमाण पत्र का नवीनीकरण और साथ ही वह क्षेत्र जिसके लिए उसे नोटरी के रूप में नियुक्त किया जाना है। अधिनियम की धारा 10 में नोटरी को हटाने और उसे कैसे हटाया जाना है, के बारे में प्रावधान है। नियमों के तहत, नियम 13 में नोटरी के कदाचार के खिलाफ जांच के बारे में प्रावधान है।

15. नोटरी के नवीकरण के संबंध में इसी प्रकार का आदेश केरल राज्य द्वारा पारित किया गया था जब असंशोधित अधिनियम अस्तित्व में था, जिसे **ए. गौरीशंकर बनाम केरल राज्य** के मामले में केरल उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई थी, जो **एआईआर 1991 केरल 225** में प्रकाशित थी, और यह मामला **केरल राज्य और अन्य बनाम केयू नारायण पोडुवल और अन्य** के मामले में केरल उच्च न्यायालय की खंड पीठ के समक्ष भी आया था, जो रिपोर्ट



एआईआर 1992 केरल 152. में प्रकाशित था विद्वान एकल न्यायाधीश. गौरीशंकर (सुप्रा) के मामले में व्यवसाय को अभिनिर्धारित किया है अधिकतम छह साल यानी दो कार्यकाल तक सीमित करना मनमाना और सार्वजनिक नीति के खिलाफ है। यह स्पष्ट रूप से सार्वजनिक हित के खिलाफ होगा यदि किसी व्यक्ति को जिसने छह साल का अनुभव प्राप्त कर लिया है, उसे केवल दूसरों को नई नौकरी का अवसर देने के लिए नौकरी से निकाल दिया जाए। एक बार नोटरी पब्लिक के रूप में पंजीकृत होने के बाद, आवेदन करने और शुल्क का भुगतान करने पर स्वतः नवीनीकरण का हकदार होता है। राज्य सरकार अधिनियम की योजना के तहत सीमित शक्ति वाली एक अधिकारी है। इसकी शक्तियों का प्रयोग वैधानिक प्रावधानों द्वारा निर्धारित है। केरल राज्य (सुप्रा) के मामले में खंड पीठ ने अभिनिर्धारित किया है कि अधिनियम की धारा 5 (2) में 'करेगा' शब्द के मद्देनजर, राज्य सरकार के पास कोई विवेकाधीन शक्ति नहीं है क्योंकि अधिनियम में धारा 10 के तहत हटाने के प्रावधान हैं, और नियम नवीनीकरण के समय जांच किए जाने के प्रावधान भी करते हैं। यह माना जाता है कि जहां तक नवीनीकरण के अधिकार का सवाल है, यह विधानमंडल पर निर्भर करता है कि वह उचित प्रावधान करें कि संबंधित प्राधिकारी में विवेक निहित होना चाहिए या नहीं। एक बार जब अधिनियम के स्पष्ट प्रावधानों के अनुसार कोई नीति बना ली जाती है, जैसा कि वर्तमान मामले में है, तो यह कहना कठिन होगा कि सरकार के पास अधिनियम के प्रावधानों के विपरीत कोई प्रशासनिक आदेश पारित करने या कोई नियम बनाने का कोई अधिकार है। यह माना गया कि धारा 5(2) के प्रावधान अनिवार्य हैं और नवीनीकरण का अधिकार स्वतः है। न्यायालय ने जेजे लोहड़ी बनाम राज्य, एआईआर 1985 कैल 140 के मामले में दिए गए निर्णय का अवलंब किया , जिसमें कलकत्ता उच्च न्यायालय ने अभिनिर्धारित किया कि एक व्यक्ति जो अन्यथा नोटरी के रूप में नियुक्त होने के योग्य है, उसे अपने लाइसेंस का नवीनीकरण कराने



का विधि अधिकार है और 70 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर उसे अयोग्य नहीं ठहराया जा सकता। विद्वान एकल न्यायाधीश ने कहा कि ऐसी अयोग्यता केवल विधि द्वारा की जा सकती है, किसी कार्यकारी आदेश द्वारा नहीं।

16. अब, हमें विधि के उपरोक्त इतिहास के आलोक में यह जांच करनी है कि 'करेगा' शब्द के स्थान पर 'करना चाहिए' शब्द के प्रति स्थापन का क्या प्रभाव है, क्या राज्य सरकार द्वारा जारी किया गया अपेक्षित आदेश अधिनियम के उद्देश्य और योजना के साथ उचित संबंध पर आधारित है, या क्या राज्य सरकार की उक्त कार्रवाई उसके विवेक पर बाधा डालती है। श्री रामा (सुप्रा) के मामले में, सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ को आंध्र प्रदेश गन्ना (आपूर्ति और विनियमन) अधिनियम, 1961 की धारा 21 की उप-धारा (3) के प्रावधानों पर विचार करना आवश्यक था। क्रय) अधिनियम, 1961। धारा 21 (3) के प्रावधानों के अनुसार सरकार किसी भी नए कारखाने को तीन साल की अवधि के लिए कर के भुगतान से छूट देने की हकदार थी और किसी भी कारखाने को, जो सरकार की राय में, विस्तार की सीमा तक, विस्तार के पूरा होने की तारीख से दो साल से अधिक की अवधि के लिए पर्याप्त रूप से विस्तारित हो गया है। राज्य सरकार ने केवल नवनिर्मित सहकारी चीनी कारखानों को छूट दी और इसे सहकारी कारखानों के अलावा नवनिर्मित चीनी कारखानों द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई। उच्च न्यायालय ने आपत्ति को खारिज कर दिया और जब मामला सर्वोच्च न्यायालय की संविधान पीठ के समक्ष आया, तो बहुमत का मत था कि "गन्ना उत्पादकों से युक्त सहकारी चीनी मिलें अन्य श्रेणियों से भिन्न कर श्रेणी में आती हैं। गन्ना उत्पादक विधानमंडल के विशेष विचार और देखभाल का विषय रहे हैं। सरकार द्वारा गन्ना उत्पादकों से युक्त चीनी मिलों को एक अलग श्रेणी के रूप में मानना और इस प्रकार उन्हें कर के भुगतान से छूट देना उचित है। प्रारंभ में, आंध्र प्रदेश राज्य ने विधि द्वारा प्रदत्त विवेक का उचित उपयोग किया है। हालांकि,



दो न्यायाधीशों (मैथ्यू और भगवती, जेजे) द्वारा बहुमत के फैसले से असहमति जताते हुए एक असहमति पूर्ण निर्णय दिया गया और सरकार के आदेश को मनमाना पाते हुए रद्द कर दिया!

17. सर्वोच्च न्यायालय ने पक्ष कारों के विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा प्रस्तुत तर्कों के आधार पर एस.ए. डे स्मिथ की प्रशासनिक कार्रवाई की न्यायिक समीक्षा (द्वितीय संस्करण) का संदर्भ दिया, जिसमें निम्नलिखित टिप्पणी की गई है: -

"किसी न्यायाधिकरण को, जिसे विवेकाधिकार सौंपा गया है, किसी सामान्य नीति नियम को अपनाकर, व्यक्तिगत मामलों में अपने विवेकाधिकार का प्रयोग करने से स्वयं को अक्षम नहीं करना चाहिए.

...लेकिन जो नियम वह बनाता है, वह सक्षम अधिनियम द्वारा परिकल्पित नियमों से परे विचारों पर आधारित नहीं होना चाहिए, अन्यथा उसने असंगत विचारों को ध्यान में रखकर अपने विवेक का अवैध रूप से प्रयोग किया है। फिर से, एक कारक जिसे विवेक का प्रयोग करते समय उचित रूप से ध्यान में रखा जा सकता है, वह विवेक पर एक अवैध बंधन बन सकता है यदि इसे एक सामान्य नियम के दर्जे तक उन्नत किया जाता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्तिगत मामलों के महत्व की कीमत पर निरन्तरता की खोज होती है। निश्चय पूर्वक, प्राधिकारी को मुद्दे को पहले से निर्धारित नहीं करना चाहिए, जैसे कि सभी आवेदनों या एक निश्चित वर्ग के सभी आवेदनों या एक निश्चित वर्ग के आवेदनों को छोड़कर सभी आवेदनों को अस्वीकार करने का संकल्प लेना और फिर ऐसे संकल्प के अनुसरण में उसके समक्ष किसी आवेदन को अस्वीकार करने की कार्यवाही करना..."

(जोर दिया गया)

18. सर्वोच्च न्यायालय ने पेड़फील्ड कृषि मंत्री के अधिवक्ता (1968) 1 ऑल ईआर 694 का भी उल्लेख किया, जिसमें यह अभीनिर्धारित किया गया था कि मंत्री द्वारा अपने पास निहित शक्ति का प्रयोग



करने से इनकार करना उस विधि के उद्देश्य को विफल करने के रूप में माना जाता है, जिसने विवेकाधिकार प्रदान किया है और इसीलिए मंत्री को अपीलकर्ताओं की शिकायत पर विधि के अनुसार विचार करने का निर्देश जारी किया गया था। न्यायालय ने उक्त निर्णय का उल्लेख करते हुए कहा कि हम पहले ही विचाराधीन अधिनियम की पृष्ठभूमि और उद्देश्य पर चर्चा कर चुके हैं और यह मानने में असमर्थ हैं कि इन मामलों में छूट देने से इनकार करके आंध्र प्रदेश राज्य उस अधिनियम के उद्देश्य को विफल करने के लिए काम कर रहा था।

19. हालांकि, सर्वोच्च न्यायालय ने रेक्स बनाम लंदन काउंटी काउंसिल, (1918) 1 केबी 68 के मामले में उक्त निर्णय के विपरीत विचार व्यक्त किए और अभिनिर्धारित किया और माना कि मामले के तथ्यों के आधार पर यह अलग है। विचाराधीन अधिनियम के पीछे की नीति स्पष्ट रूप से किसी भी वस्तु की बिक्री या बिलों या ऐसी ही चीजों के वितरण की अनुमति देना था और यह निर्णय लेते हुए कि कोई भी अनुमति नहीं दी जाएगी, यह ही ढंग से अभिनिर्धारित किया गया कि लंदन काउंटी काउंसिल ने संपत्ति के मामले में अपने विवेक का प्रयोग नहीं किए हैं। सर्वोच्च न्यायालय ने आर. बनाम पोर्ट ऑफ लंदन अथॉरिटी, (1919) 1 केबी 176, 184 पर अवलंब किया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया था कि

"एक ओर ऐसे मामले हैं, जहां न्यायाधिकरण ने अपने विवेक का ईमानदारी से प्रयोग करते हुए एक नीति अपनाई है, और आवेदक को सुनने से इनकार किए बिना, उसे सूचित किया है कि उसकी नीति क्या है, और उसे सुनने के बाद वह अपनी नीति के अनुसार उसके विरुद्ध निर्णय देगा, जब तक कि उसके मामले में कोई अपवाद न हो, यदि नीति ऐसे कारणों से अपनाई गई है, जिन पर न्यायाधिकरण वैध रूप से विचार कर सकता है, तो ऐसे निर्णय पर कोई आपत्ति नहीं की जा सकती। दूसरी ओर ऐसे मामले भी हैं, जहां न्यायाधिकरण ने किसी विशेष प्रकार के आवेदन पर सुनवाई न करने का नियम



पारित किया है, या निर्णय लिया है, चाहे वह किसी भी व्यक्ति द्वारा किया गया हो। इन दो श्रेणियों के बीच एक व्यापक अंतर किया जाना चाहिए।"

(जोर दिया गया)

20. सर्वोच्च न्यायालय ने ब्रिटिश ऑक्सीजन बनाम मिनिस्टर ऑफ टेक्नोलॉजी (1970) 3 ऑल ईआर 165 का भी अवलंब किया है , जिसमें कहा गया कि हाउस ऑफ लॉर्ड्स उस मामले में औद्योगिक विकास अधिनियम, 1966 के प्रावधानों पर विचार कर रहा था। अधिनियम में व्यापार बोर्ड को किसी भी व्यक्ति को व्यवसाय के दौरान योग्य औद्योगिक प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए नई मशीनरी या संयंत्र प्रदान करने में उस व्यक्ति द्वारा किए गए अनुमोदित पूंजीगत व्यय के लिए अनुदान देने का प्रावधान था। यह कहने के बाद कि बोर्ड का उद्देश्य विवेकाधिकार रखना था और अधिनियम के प्रावधानों की जांच करने के बाद हाउस ऑफ लॉर्ड्स इस निष्कर्ष पर पहुंचा कि बोर्ड उन सभी पात्र लोगों को अनुदान देने के लिए बाध्य नहीं था , हैं और न ही प्रावधानों ने किसी व्यक्ति को अनुदान पाने का कोई अधिकार दिया है। आर. बनाम पोर्ट ऑफ लंदन अथॉरिटी के निर्णय से पहले से संदर्भित अंश को उद्धृत करने के बाद, लॉर्ड रीड ने कहा:

"लेकिन जिन परिस्थितियों में विवेकाधिकार का प्रयोग किया जाता है, वे बहुत भिन्न होती हैं और यह अनुच्छेद हर मामले में अक्षरशः लागू नहीं किया जा सकता। सामान्य नियम यह है कि जिस किसी को भी वैधानिक विवेकाधिकार का प्रयोग करना है, आवेदन पर सुनवाई करने से मना नहीं करना चाहिए न्यायाधीश के अनुसार , मुझे नहीं लगता कि नीति और नियम में कोई बड़ा अंतर है। ऐसे मामले हो सकते हैं, जहां किसी अधिकारी या प्राधिकारी को नीति में बदलाव का आग्रह करने वाले उचित रूप से प्रस्तुत किए गए पर्याप्त तर्क को सुनना चाहिए। प्राधिकारी को जो नहीं करना चाहिए, वह है



सुनने से इनकार करना। लेकिन किसी मंत्रालय या बड़े प्राधिकरण को पहले से ही इसी तरह के कई आवेदनों पर कार्यवाही करना पड़ सकता है और तब उन्होंने लगभग निश्चित रूप से एक ऐसी नीति विकसित की होगी जो इतनी सटीक होगी कि उसे नियम कहा जा सकता है। इस पर कोई आपत्ति नहीं हो सकती, बशर्ते प्राधिकारी हमेशा किसी भी व्यक्ति की बात सुनने के लिए तैयार हो, जिसके पास कुछ नया कहने के लिए हो, बेशक मेरा मतलब यह नहीं है कि मौखिक सुनवाई की आवश्यकता है। वर्तमान मामले में मंत्री के अधिकारियों ने अपीलकर्ताओं द्वारा कही गई सभी बातों पर ध्यानपूर्वक विचार किया है और मुझे कोई संदेह नहीं है कि वे ऐसा करना जारी रखेंगे। मंत्री कभी भी अपना विचार बदल सकते हैं और इसलिए मेरा मानना है कि अपीलकर्ता इस बात पर निर्णय लेने के हकदार हैं कि क्या ये सिलेंडर अनु धन लिए पात्र हैं!

(जोर दिया गया)

विस्काउन्ट दिलहोम ने पुनः आर. बनाम पोर्ट ऑफ लंदन अथॉरिटी के संदर्भ का उल्लेख करते हुए कहा:

"बैंक्स, एल.जे. का स्पष्ट आशय था कि बाद के मामले में प्राधिकारी या न्यायाधिकरण को सौंपे गए विवेक का प्रयोग करने से इनकार किया गया है, लेकिन नीतिगत निर्णय और नियम के बीच अंतर करना आसान नहीं हो सकता है। इस मामले में यह चुनौती नहीं दी गई थी कि बोर्ड के पास ऐसी वस्तु के संबंध में अनुदान न देने की नीति अपनाने का अधिकार है। उस नीति को समान रूप से नियम के रूप में वर्णित किया जा सकता है। यह उचित और सही दोनों था कि बोर्ड को उन लोगों को बताना चाहिए जो इस नीति में रुचि रखते हैं जिसका वह पालन करने जा रहा है। ऐसा करने से समय और व्यय की बर्बादी वाले निरर्थक आवेदनों से बचा जा सकता है। बोर्ड का कहना है कि उसने किसी भी आवेदन पर विचार करने से इनकार नहीं किया है। उसने अपीलकर्ताओं के आवेदन पर विचार किया, इन



परिस्थितियों में इस मामले में यह तय करना आवश्यक नहीं है कि, अगर उसने इस आधार पर आवेदन पर विचार करने से इनकार कर दिया होता कि यह £25 से कम मूल्य वाली वस्तु से संबंधित है, तो उसने गलत कार्यवाही किया होता।

मुझे यह स्वीकार करना होगा कि मुझे कुछ संदेह है कि क्या बैंकर्स , एल.जे. द्वारा ऊपर उद्धृत खंडिका में इस्तेमाल किए गए शब्द वास्तव में इस तरह के मामले पर लागू होते हैं। यह कुछ हद तक व्यर्थ और समय की बर्बादी लगती है कि बोर्ड को उन आवेदनों पर विचार करना चाहिए जो इसके नीतिगत निर्णय की विफलता के परिणामस्वरूप बंधनकारी हैं। बेशक इस संबंध में किया जा सकता है कि नीति को बदला जाना चाहिए। (जोर दिया गया)

21. सर्वोच्च न्यायालय ने हेल्सबरी (खंड 1, 4वां संस्करण, पैरा 33, पृष्ठ 35) पर आगे विचार किया।

35) जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि:

"एक वैधानिक विवेक से संपन्न सार्वजनिक निकाय वैध रूप से व्यक्तिगत मामलों में अपने विवेक का प्रयोग करने के तरीके के बारे में खुद को मार्गदर्शन देने के लिए नीति के सामान्य नियमों या सिद्धांतों को अपना सकता है, बशर्ते कि ऐसे नियम या सिद्धांत शक्तियों के प्रयोग के लिए विधि रूप से सुसंगत हों, सक्षम विधि के उद्देश्य के अनुरूप हों और मनमाने या अनैतिक न हों। फिर भी, इसे किसी विशेष मामले में वास्तविक विवेक का प्रयोग करने से खुद को अक्षम नहीं बनाना चाहिए जिसमें सीधे व्यक्तिगत हित शामिल हों, इसलिए यदि मामले की परिस्थितियाँ विशेष उपचार की मांग करती हैं तो इसे सामान्य नियम में अपवाद बनाने पर विचार करने के लिए तैयार रहना चाहिए। ये प्रस्ताव, मुख्य रूप से लाइसेंसों और अन्य नियामक शक्तियों के संदर्भ में विकसित हुए हैं, अन्य स्थितियों पर भी लागू किए गए हैं, उदाहरण के लिए, विवेकाधीन निवेश अनुदान का पुरस्कार और स्कूलों की विभिन्न कक्षाओं में विद्यार्थियों का



आवंटन। हालाँकि, विवेकाधीन शक्ति का आयाम इतना व्यापक हो सकता है कि सक्षम प्राधिकारी को किसी विशेष वर्ग के व्यक्तियों के पक्ष में अपने विवेक का प्रयोग न करने के लिए एक निश्चित नियम अपनाने का अधिकार दिया जा सकता है; और ऐसी शक्ति को विधि द्वारा स्पष्ट रूप से प्रदान किया जा सकता है।"

(जोर दिया गया)

22. यदि हम श्री राम (सुप्रा) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा संदर्भित और उद्धृत उपरोक्त निर्णयों पर गौर करें, तो इस तथ्य पर विचार करते हुए कि क्या किसी विशेष मामले में सरकार ने किसी विशेष विधि के तहत शक्ति का प्रयोग करते समय अपने विवेक को बाधित किया है या नहीं, न्यायालय को अधिनियम की संपूर्ण पृष्ठभूमि और इसके पीछे के उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए यह व्याख्या और निर्णय करना आवश्यक है कि प्राधिकारी में निहित शक्ति का प्रयोग किस प्रकार किया गया है, और साथ ही विवेक का प्रयोग करते समय न्यायाधिकरण को किसी सामान्य नियम या नीति को अपनाकर व्यक्तिगत मामलों में अपने विवेक का प्रयोग करने से खुद को अक्षम नहीं बनाना चाहिए। वह जो नियम बनाता है, वह सक्षम बनाने वाले अधिनियम द्वारा परिकल्पित विचारों से अलग विचारों पर आधारित नहीं होना चाहिए, अन्यथा उसने हमेशा अप्रासंगिक विचारों को ध्यान में रखते हुए अपने विवेक का प्रयोग किया है। प्राधिकारी को मुद्दे को पहले से निर्धारित नहीं करना चाहिए, जैसे कि सभी आवेदनों या एक निश्चित वर्ग के सभी आवेदनों या एक निश्चित वर्ग के आवेदनों को छोड़कर सभी आवेदनों को अस्वीकार करने का संकल्प लेना और फिर ऐसे निर्णय के अनुसरण में उसके समक्ष किसी आवेदन को अस्वीकार करना। एक तरफ ऐसे मामले हैं जहां न्यायाधिकरण ने अपने विवेक का ईमानदारी से इस्तेमाल करते हुए एक नीति अपनाई है और आवेदक की सुनवाई से इनकार किए बिना उसे बता दिया है कि उसकी नीति क्या है और उसकी सुनवाई के बाद वह अपनी नीति के अनुसार उसके खिलाफ फैसला सुनाएगा, जब तक कि उसके मामले



में कुछ अपवाद न हो। जैसा कि लॉर्ड रीड ने कहा सामान्य नियम यह है कि जिस किसी को भी वैधानिक विवेक का प्रयोग करना है, उसे आवेदन को सुनवाई करने से मना नहीं करना चाहिए (बैंकर्स , एल.जे. के अनुसार )। हेल्सबरी के अनुसार, वैधानिक विवेक से संपन्न एक सार्वजनिक निकाय व्यक्तिगत मामलों में अपने विवेक का प्रयोग करने के तरीके के बारे में खुद को मार्गदर्शन देने के लिए वैध रूप से सामान्य नियम या नीति के सिद्धांतों को अपना सकता है, बशर्ते कि ऐसे नियम या सिद्धांत अपनी शक्तियों के प्रयोग के लिए विधि रूप से प्रासंगिक हों, सक्षम कानून के उद्देश्य के अनुरूप हों और मनमाने या मनमानी न हों। फिर भी, इसे व्यक्तिगत हितों से सीधे जुड़े किसी विशेष मामले में वास्तविक विवेक का प्रयोग करने से खुद को अक्षम नहीं बनाना चाहिए।

23. उपर्युक्त सिद्धांतों के आधार पर, यदि हम वर्तमान मामले की जांच अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों की पृष्ठभूमि और उद्देश्यों के साथ करें, जो पात्रता मानदंड, नोटरी पब्लिक की नियुक्ति की प्रक्रिया, हटाने और नियमों के नियम 13 के तहत कदाचार के बारे में जांच भी निर्धारित करते हैं, तो अधिनियम के पीछे का उद्देश्य अधिनियम की धारा 8 में उल्लिखित उनके द्वारा किए जाने वाले विभिन्न कार्यों के लिए नोटरी नियुक्त करना था। ए. गौरीशंकर (सुप्रा) के मामले में केरल उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश ने पब्लिक नोटरी के पद की पृष्ठभूमि का उल्लेख किया था। केरल उच्च न्यायालय के एकल न्यायाधीश के आदेश, केरल उच्च न्यायालय की खंड पीठ के निर्णय और कलकत्ता उच्च न्यायालय की एकल पीठ के फैसले के बाद, वर्ष 1992 में नोटरी की नियुक्ति और अधिनियम के प्रशासन से संबंधित अन्य मामलों से संबंधित सभी पहलुओं का अध्ययन करने के उद्देश्य से एक समिति गठित की गई थी। उक्त समिति ने अधिनियम और उसके अधीन बनाए गए नियमों का गहन अध्ययन करने के बाद दिनांक 30-9-1994 को अपनी अनुशंसा प्रस्तुत की। 1999 के संशोधित अधिनियम



संख्या 36 के उद्देश्यों और कारणों को अन्य बातों के साथ-साथ नोटरी पब्लिक के व्यवसाय के प्रमाण पत्र के नवीकरण की प्रक्रिया को युक्तिसंगत बनाने के उद्देश्य से लाया गया था। अधिनियम की धारा 5 (1) (ख ) में तीन वर्ष के स्थान पर पांच वर्ष प्रति स्थापित किए गए, जिससे प्रमाण पत्र की अवधि तीन वर्ष से बढ़ाकर पांच वर्ष कर दी गई। अधिनियम की धारा 5 की उपधारा (2) में 'करेगा' शब्द के स्थान पर 'करना चाहिए ' शब्द प्रति स्थापित किया गया, तथा पुराने अधिनियम में 'हकदार होगा' शब्द हटा दिए गए तथा किसी भी नोटरी पब्लिक के व्यवसाय के प्रमाण पत्र को एक बार में पांच वर्ष की अवधि के लिए नवीनीकृत किया जाएगा शब्द जोड़ा गया, जिससे संशोधित अधिनियम के अनुसार व्यवसाय के प्रमाण पत्र के नवीकरण के मामले में सरकार को विवेकाधिकार दिया गया। अधिनियम की धारा 5 के प्रावधानों को संशोधित करने से पहले केरल और कलकत्ता उच्च न्यायालयों के निर्णय के अनुसार, सरकार के पास कोई विवेकाधिकार नहीं था और सरकार आवेदन किए जाने पर प्रमाण पत्र को नवीनीकृत करने के लिए बाध्य थी। संबंधित नोटरी पब्लिक द्वारा प्रमाण पत्र को नवीनीकृत करने के लिए सरकार को अपने विवेक का प्रयोग करने की शक्ति प्रदान की गई। इसलिए, इन प्रावधानों में संशोधन करके, सरकार को नवीकरण के लिए अपने विवेक का प्रयोग करने की शक्ति प्रदान की गई और साथ ही इस कठिनाई को दूर किया गया कि पहले सरकार नोटरी पब्लिक द्वारा आवेदन करने पर प्रमाण पत्र को नवीनीकृत करने के लिए बाध्य थी।

24. अधिनियम के उपरोक्त उद्देश्यों और पृष्ठभूमि के आलोक में, और ऊपर संदर्भित निर्णयों के आलोक में, अब हमें यह जांचना है कि क्या छत्तीसगढ़ सरकार द्वारा पारित आदेश दिनांक 31-12-2002 द्वारा, जिसे एक बार से अधिक प्रमाण पत्र का नवीनीकरण नहीं करने का सरकार का नीतिगत निर्णय कहा गया है, सरकार ने संशोधन अधिनियम के अनुसार विवेक का प्रयोग करने से स्वयं को अक्षम नहीं किया है, दूसरे शब्दों में, क्या सरकार ने दिनांक 31-12-2002



के आक्षेपित आदेश द्वारा अपने विवेक पर रोक लगाई है। यदि हम अधिनियम की धारा 5(2) के संशोधित प्रावधानों को देखें, तो केंद्र सरकार ने नोटरी पब्लिक के रूप में व्यवसाय के प्रमाण पत्र के नवीनीकरण की प्रक्रिया को युक्तिसंगत बनाने के लिए प्रावधानों में संशोधन किया है। इसके पीछे उद्देश्य प्रत्येक नोटरी के मामले पर व्यक्तिगत रूप से विचार करना था, कि उसके प्रमाण पत्र का नवीनीकरण किया जाना है या नहीं। अधिनियम में उक्त संशोधन के पीछे उद्देश्य यह था कि नोटरी के प्रमाण-पत्र के नवीनीकरण पर विचार करते समय सरकार को प्रत्येक व्यक्ति के मामले पर विचार करना होगा तथा यह पता लगाना होगा कि क्या गुण-दोष के आधार पर कोई व्यक्ति प्रमाण-पत्र के नवीनीकरण का हकदार है अथवा उसने अपने कृत्यों या कर्मों के कारण स्वयं को प्रमाण-पत्र के नवीनीकरण से वंचित कर दिया है, उदाहरण के लिए, किसी नोटरी पब्लिक के विरुद्ध उसके आचरण के संबंध में शिकायत के कारण अथवा कोई विशेष नोटरी पब्लिक सरकार द्वारा जारी नियमों एवं दिशा-निर्देशों का पालन नहीं कर रहा था अथवा उसने स्वयं को इस प्रकार से संचालित किया है, जिसके कारण वह प्रमाण-पत्र के नवीनीकरण से वंचित है अथवा किसी अन्य अक्षमता के कारण वह विशेष नोटरी अपने कार्य करने में सक्षम नहीं है। इसलिए, इस अधिनियम के पीछे उद्देश्य नोटरी पब्लिक के प्रमाण-पत्र के नवीनीकरण के लिए प्रत्येक व्यक्तिगत मामले पर विचार करना था। संशोधन को शामिल करने के पश्चात भी अधिनियम अथवा नियमों में ऐसा कुछ भी नहीं दर्शाया गया था कि राज्य किसी कार्यकारी आदेश द्वारा सभी नोटरियों को उनके प्रमाण-पत्रों के नवीनीकरण से वंचित करने का हकदार होगा।

25. यह सही है कि समाप्त करने और जांच के प्रावधान अधिनियम और नियमों में पहले से ही मौजूद हैं, लेकिन जांच करने के बजाय या कभी-कभी जब जांच भी संभव नहीं होती है, तो कम से कम सरकार उन सभी पहलुओं पर विचार करने की हकदार है जो जांच का विषय हो सकते हैं और इनकार कर सकती है। विस्तृत जांच का



सहारा लिए बिना और समय बर्बाद किए बिना नवीनीकरण नहीं किया जा सकता। लेकिन, मेरे विचार से, अधिनियम में संशोधन करते समय विधानमंडल की यह मंशा कभी नहीं थी कि एक विशेष श्रेणी के अधिवक्ताओं इतने कम कार्यकाल के बाद अपने प्रमाण पत्रों के नवीनीकरण का अधिकार नहीं होगा। छत्तीसगढ़ राज्य द्वारा उपरोक्त निर्णयों के आलोक में जारी किया गया आक्षेपित कार्यकारी आदेश, मेरे विचार से, सरकार के विवेक पर रोक लगाने के बराबर है। अधिनियम की पृष्ठभूमि और अधिनियम की योजना को देखते हुए, 10 वर्ष की अवधि को अधिनियम और योजना के अनुरूप नहीं कहा जा सकता है। इसका उल्लेख आक्षेपित आदेश में किया गया है और यह भी तर्क दिया गया है कि अधिक से अधिक वकीलों को मौका देने के लिए इसे जारी किया गया है। लेकिन, यह वह उद्देश्य नहीं है जिसके लिए अधिनियम बनाया गया था। यदि हम अधिनियम की धारा 8 को देखें, जो नोटरी पब्लिक के कार्यों का वर्णन करती है, तो यह दर्शाता है कि नोटरी पब्लिक के पद के साथ, सार्वजनिक हित का तत्व जुड़ा हुआ है, दूसरे शब्दों में, यह एक रोजगारोन्मुखी पद नहीं है। आक्षेपित आदेश का अधिनियम के उद्देश्यों से कोई संबंध नहीं है और यह एक सामान्य नियम को अपनाने के बराबर है जो व्यक्तिगत मामलों में विवेकाधिकार का प्रयोग करने से खुद को अक्षम करता है, और यह संशोधित अधिनियम में विचार किए गए विचारों से परे विचारों पर आधारित है। आक्षेपित आदेश सामान्य नियम से प्रभावित है कि वैधानिक विवेकाधिकार का प्रयोग करते समय प्राधिकारी को आवेदन के प्रति अपने कान बंद नहीं करने चाहिए। भले ही यह एक नीतिगत निर्णय हो, लेकिन यह मनमाना और मनमानी पूर्ण है जो विशेष श्रेणी के सभी विधि व्यवसायियों को केवल दस साल का कार्यकाल पूरा करने के आधार पर अपने प्रमाण पत्र का नवीनीकरण करने से रोकता है।

26. एस.ए. डी स्मिथ की प्रशासनिक कार्रवाई की न्यायिक समीक्षा में उल्लिखित सिद्धांत के अनुसार, प्राधिकारी को "किसी निश्चित



वर्ग के सभी आवेदनों" को अस्वीकार करने का संकल्प करके विवादक को पहले से नोस्करण नहीं करना चाहिए। नियमों के नियम 3 के अवलोकन मात्र से विधानमंडल की मंशा दर्शित होती है कि नोटरी पब्लिक के पद को कितना महत्व दिया गया है कि किसी व्यक्ति को योग्य बनने के लिए संघ में 10 साल का अनुभव होना चाहिए जो उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए पात्रता मानदंड है। इतना ही नहीं, नियमों की योजना के अनुसार नोटरी पब्लिक के पद पर नियुक्ति के लिए किसी अधिवक्ता की अनुसंशा करने से पहले, प्राधिकारी विधिक परिषद द्वारा अधिवक्ता संघ और बार एसोसिएशन के विचार अनिवार्य हैं और किसी व्यक्ति को लंबे व्यवसाय के बाद नियुक्त किया जाता है, वह भी सभी बाधाओं को दूर करके। नोटरी पब्लिक को सौंपे गए कर्तव्यों की प्रकृति को ध्यान में रखते हुए, नोटरी पब्लिक के कार्यालय के साथ एक महान महत्व/पवित्रता जुड़ी हुई है। नोटरी पब्लिक के कार्यालय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को देखते हुए, राज्य सरकार के दिनांक 31-12-2002 के आक्षेपित कार्यकारी आदेश में कहा गया है कि कोई भी व्यक्ति नोटरी के पद पर दस वर्ष से अधिक समय तक नहीं रह सकता, जो कि एक छोटी अवधि है, जो कानून के सिद्धांत के अनुसार संभव नहीं है, तथा यह मनमाना और अविवेकपूर्ण है।

27. उपर्युक्त निर्णयों के अनुसार, सरकार को प्रत्येक मामले पर उसके गुण-दोष के आधार पर विचार करना आवश्यक है, तथा इस उद्देश्य के लिए सरकार एक नीति या नियम बना सकती है कि प्रत्येक व्यक्ति के प्रमाण-पत्र पर किस प्रकार विचार किया जाए, उसका नवीनीकरण किया जाए या अस्वीकार किया जाए, तथा तदनुसार सरकार दिशा-निर्देश तैयार कर सकती है। लेकिन आक्षेपित आदेश निश्चित रूप से सभी आवेदनों या एक निश्चित वर्ग के सभी आवेदनों को अस्वीकार करने का संकल्प करके विवादक का पूर्व नियकरण कर रहा है।

28. परिणयत :



क. डब्लू.पी. संख्या 3247/2003 (चन्द्र प्रकाश शर्मा बनाम छत्तीसगढ़ राज्य व अन्य) को स्वीकार किया जाता है, तथा 31 दिसम्बर, 2002 का आदेश निरस्त किया जाता है। फलस्वरूप, प्रमाण पत्र के नवीनीकरण से इनकार करने वाला आदेश भी निरस्त किया जाता है।

ब। परिणामस्वरूप, 31 दिसम्बर, 2002 के आक्षेपित आदेश को निरस्त कर दिए जाने के कारण, जो कि याचिका संख्या 494/2003, 1894/2003 और 624/2003 में याचिका कर्ताओं के प्रमाण-पत्रों के नवीकरण से इनकार करने का आधार है, उनके नवीकरण से इनकार करने वाले आदेश निरस्त हो गए हैं और ये याचिकाएं भी स्वीकार की जाती हैं।

सी. प्रशांत कुमार ठाकुर द्वारा दाखिल डब्लू.पी. संख्या 1171/2003 के अवलोकन से पता चलता है कि उन्हें वर्ष 1993 में नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था और उनके नवीनीकरण के लिए अंतिम आवेदन 26.12.2002 को अस्वीकार कर दिया गया था। मदन लाल गुप्ता द्वारा दाखिल डब्लू.पी. संख्या 510/2003 के अवलोकन से पता चलता है कि शुरू में उन्हें 30 मई, 1992 को नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था और उनका अंतिम कार्यकाल 29-5-2001 को समाप्त हो गया था; मई, 2001 के महीने में, उन्होंने नवीनीकरण के लिए आवेदन किया और उनके नवीनीकरण को 23-12-2002 को अस्वीकार कर दिया गया था। अनिल कुमार तिवारी द्वारा दाखिल डब्लू.पी.सं.1600/2003 के अवलोकन से पता चलता है कि उन्हें 22-7-1993 को नोटरी पब्लिक के रूप में नियुक्त किया गया था, और उनका कार्यकाल 21-7-2002 तक बढ़ाया गया था, उसके बाद, उन्होंने नवीनीकरण के लिए आवेदन किया, लेकिन उनके नवीनीकरण आवेदन को 26-12-2002 के आदेश (अनुलग्न पी-5) द्वारा अस्वीकार कर दिया गया था। इसलिए, उपरोक्त तीनों याचिका कर्ताओं के आवेदन सरकार द्वारा 31-12-2002 को लिए गए नीतिगत निर्णय से पहले ही खारिज कर दिए गए थे, जबकि, राज्य द्वारा अपने रिटर्न में लिया गया आधार यह है कि उनके आवेदन 31



दिसंबर, 2002 के नीतिगत निर्णय के आधार पर खारिज कर दिए गए थे। स्वतः ही, उनके नवीनीकरण से इनकार करने वाला आदेश अवैध है और इसके अलावा, उपरोक्त तीन याचिका कर्ताओं ने नोटरी पब्लिक के रूप में दस साल का व्यवसाय भी पूरा नहीं किया था। इन परिस्थितियों में, इन याचिकाओं (डब्ल्यू. पी. संख्या 1171/2003, 510/2003 और 1600/2003) को भी स्वीकार की जाती है, और नोटरी पब्लिक के रूप में व्यवसाय करने के लिए उनके प्रमाणपत्रों के नवीनीकरण से इनकार करने वाले आदेश रद्द कर दिए जाते हैं।

घ. राज्य सरकार को निर्देश दिया जाता है कि वह याचिका कर्ताओं के मामले को उनके स्वयं के गुण-दोष के आधार पर व्यक्तिगत मामले के रूप में विचार करें, तथा विधि के अनुसार निर्णय ले।

ई. इन परिस्थितियों में, मैं व्यय के सबंद में कोई आदेश नहीं दे रहा हूँ।



एल.सी.भादू

न्यायाधीश

**अस्वीकरण** हिन्दी भाषा में निर्णय का अनुवाद पक्ष कारों के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा । समस्त कार्यालय एवं व्यवहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेजी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।

Translated By .....तेजस्विता नंदिनी शाह .....

